पर उपदेश कुशल बहुतेरे

आलेख संग्रह

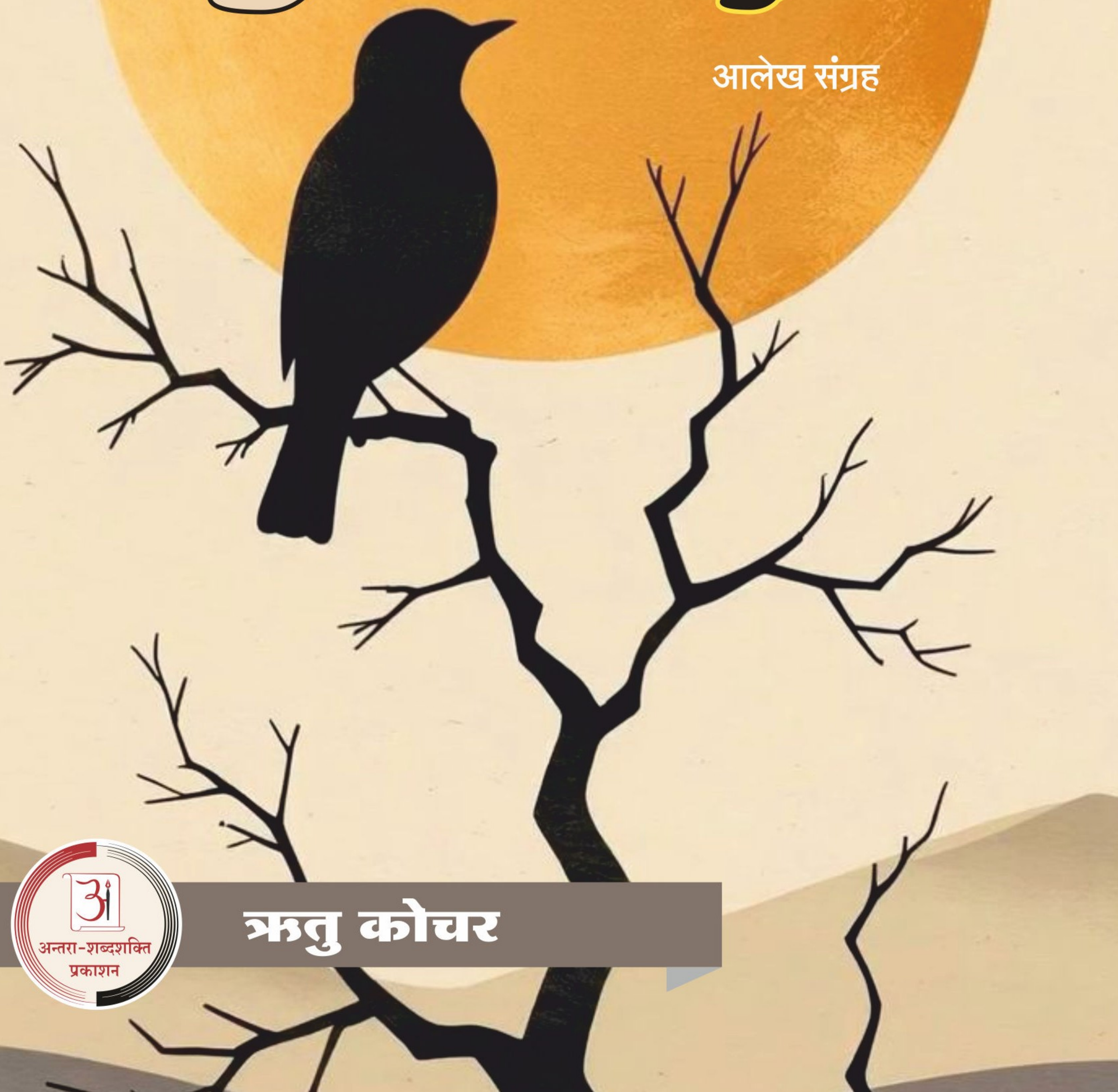

ऋतु कोचर

अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन

पर उपदेश, कुशल बहुतेरे

आलेख संग्रह

ऋतु कोचर

अन्तरा शब्दशक्ति प्रकाशन

वारासिवनी, मध्यप्रदेश 481331

978-93-94528-54-3

संपादक- डॉ. प्रीति समकित सुराना
आवरण चित्र- संदीप कुमार सोनी, वारासिवनी
मुख्य कार्यालय- 15 नेहरु चौक, वारासिवनी, जिला बालाघाट (म.प्र.) 481331
मोबाईल-9009423393
ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com
वेबसाईट- www.antrashabdshakti
प्रथम संस्करण- 2026, **ऋतु कोचर**
मूल्य- 200/- रुपये
मुद्रक– सोनी प्रिंटकॉम, वारासिवनी

THE BOOK WRITTEN BY RITU KOCHAR

वैधानिक चेतावनीः- इस पुस्तक का सर्वाधिकार सुरक्षित है। लेखक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश को फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रोनिक अथवा मशीनी किसी भी माध्यम में अथवा संग्रहण और पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा किसी भी रूप में पुनरुत्पादित अथवा संचारित प्रसारित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तुत पुस्तक की समस्त रचनाएँ लेखक द्वारा अन्तरा-शब्दशक्ति प्रकाशन को प्रेषित की गई है। अतः प्रत्येक रचना की मौलिकता के किसी भी दावे हेतु लेखक जिम्मेदार है। प्रस्तुत पुस्तक के घटनाक्रम पात्र, भाषाशैली एवं स्थान सभी लेखक की कल्पना है। किसी भी प्रकार के वाद-विवाद के लिए प्रकाशक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

भूमिका

स्वयं की पाती स्वयं के नाम

प्रिय ऋतु,

पूछने की ज़रूरत नहीं कि कैसी हो, मैं सब जानती हूँ। आज यह बड़ा अनोखा अवसर मिला है, जिसमें मुझे मुझसे ही रु-ब-रु होना है। वास्तव में यह ज़रूरत क्यों पड़ी-क्योंकि सबको समय देते-देते कब जीवन के चालीस साल निकल गए, सपना-सा लगता है।

मैं जानती हूँ, बहुत सपने थे तुम्हारे। तुम काफ़ी कुछ करना चाहती थी, पर कभी परिस्थितियाँ प्रतिकूल रहीं, तो कभी मन-क्योंकि बहुत-सी ज़िम्मेदारियाँ सँभालनी थीं। पर क्यों तुमने उन सबके बीच अपने लिए समय नहीं माँगा? हाँ-हाँ, जानती हूँ, क्योंकि तुम्हें माँगने की आदत नहीं है। ऐसा लगता है जैसे तुम बिना कहे हर एक दिल की बात समझती हो, चेहरा देखकर ही भाव भाँप लेती हो। तो क्यों नहीं बाकी लोग तुम्हें समझ पाते? तुम्हारे बिना बोले तुम्हें तुम्हारे हिस्से की खुशियाँ दे देते?

अरे पगली, यह दुनिया ऐसी ही है। यहाँ बिना माँगे पानी भी नहीं मिलता, हक़ तो बहुत दूर की बात है। हैं कुछ लोग खुशक़िस्मत, जिन्हें अपने हिस्से का आसमान मिल जाया करता है, पर उनमें तुम्हारा नाम नहीं। कितनी बार मैंने तुम्हें समझाया, और मुझे पता है कि अपने स्तर पर तुमने कोशिश भी की। अपने लोगों में तुम्हें और तुम्हारे गायन, लेखन आदि गतिविधियों को सराहा भी जाता है। पर तुम सिर्फ़ इतने के लिए नहीं बनी हो। तुम्हें कुएँ का मेंढक बनकर नहीं रहना है; अपनी प्रतिभा को अवसर देना है। और मुझे बहुत खुशी है कि मेरी बात मानकर तुमने “अंतरा” जैसे मंच को अपने तराशे जाने के लिए चुना। फिर प्रीति जैसी सखी, जिसने अनेकों हुनरों को पहचान दिलाई- उसका मार्गदर्शन तुम्हारे साथ है। तो निश्चित ही तुम अपने हिस्से का आसमान पा ही लोगी। ज़िम्मेदारियों की चिंता मत करना। मुझे तुम पर, तुमसे ज़्यादा विश्वास है कि तुम सबका तालमेल भली-भाँति बना लोगी।

तुम्हारी उत्तरोत्तर प्रगति की कामना करती—

तुम्हारी ही अंतरात्मा

ऋतु कोचर, कटंगी (म.प्र.)

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृष्ठ क्र.
1.	फिर मुस्कुराएगा भारत	5
2.	पर-उपदेश कुशल बहुतेरे	6
3.	हाँ, मुझे विश्वास है	7
4.	करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान	8
5.	वास्तविक पीड़ा	9
6.	जीत क्या है?	10
7.	पल-पल बदलता जीवन	11
8.	समय सृजन में लगता है, विसर्जन में नहीं	12
9.	पर्वाधिराज पर्युषण : एक परिचय	13
10.	प्रिय 2021	14
11.	घर की अर्थव्यवस्था में महिलाओं का योगदान	15
12.	पढ़े फ़ारसी, बेचे तेल	16
13.	बदलते मौसम और बदलते रिश्तों का जीवन पर प्रभाव	17
14.	धुएँ में समाप्त होता युवा वर्ग	18
15.	जहाँ चाह वहाँ राह	19
16.	नारी बनी सबकी रक्षक	20
17.	आज की पीढ़ी	21-22
18.	आपदाकाल में जीवन प्रबंधन	23
19.	पीहर बहुत याद आता है।	24
20.	वैचारिक बदलाव ज़रूरी है	25
21.	डर के आगे जीत है — सत्य घटना	26
22.	दुनिया है दिलवालों की	27
23.	महिला दिवस पर विशेष	28-29
24.	समय किसी के लिए रुकता नहीं है!	30
25.	स्त्री...!	31
26.	दुश्मनी	32

फिर मुस्कुराएगा भारत

एकता में है दम,
एकता से हैं हम,
एकता से ही होते हैं दुश्मन ख़त्म।
देखो गौरव-भरे अपने इतिहास को,
जलाई हमने लौ, मिटाया है तम।

एक ऐसा वक़्त, जो हमने—क्या हमारे बड़े-बुज़ुर्गों ने भी—अपने पूरे जीवन में कभी नहीं देखा। संपूर्ण यातायात बंद, ज़िलों की सीमाएँ सील, घूमने-फिरने की आज़ादी ख़त्म। आज पूरा देश परेशान है। रास्ते वीरान हैं। सभी असमंजस में हैं— क्या करें, क्या न करें। कहीं हमारे कुछ करने से बीमारी हमारे घर में न आ जाए। एक वायरस से सारा विश्व सकते में है।

पर हमने भी इस विपदा के समय में अपना धैर्य और संयम बनाए रखा है। घर में रहकर, सामाजिक दूरी बनाए रखकर और संक्रमण के लक्षणों की जानकारी रखकर हम इस बीमारी से जीत हासिल कर सकते हैं।

हमें आशा ही नहीं, पूरा विश्वास है—हमारा अथक परिश्रम और जीतने का जज़्बा हमारे देश को इस महामारी के भँवर से बाहर ज़रूर लाएगा। फिर से रास्तों पर रौनक होगी, लोग बेपरवाह घूम सकेंगे, काम-काज फिर से शुरु होंगे, आर्थिक रूप से देश फिर से मज़बूत होगा। भारत फिर से मुस्कुराएगा, फिर से खिलखिलाएगा।

पर-उपदेश कुशल बहुतेरे

मोबाइल के इस युग में हर कोई ज्ञानवर्धक मैसेज भेजने की होड़ में धुरंधर बन रहा है। एक मोबाइल से दूसरे, दूसरे से तीसरे में अथाह ज्ञान और सीख का दरिया बहता है, पर भेजने वालों को देखें कि क्या उनके जीवन में इन ज्ञान-गंगा की कुछ बूँदें भी उन्हें भिगो पाती हैं, तो निश्चित ही जवाब नहीं होगा। अरे, ज्ञान भले ही कम हो, पर स्वयं के जीवन-व्यवहार में यदि वह समाहित हो, तो ही सार्थक है। केवल व्यर्थ ज्ञान-दान तो "पर-उपदेश कुशल बहुतेरे"—यही कहावत चरितार्थ करता है।

ऐसे ही दो सास मिलकर जब इसी तरह ज्ञान-गंगा बहाती हैं, तो सच कहूँ, उसमें डूब जाने का मन करता है। उनकी बातें तो ऐसी रहती हैं कि इनसे ज़्यादा अव्वल सास तो किसी को मिल ही नहीं सकती—बहू को बेटी समझो, माँ बनकर प्यार दो, अपना घर छोड़कर आई है, वह भी किसी की बेटी है, आदि-आदि। वैसे सास नामक प्राणी अपनी बेटी के लिए यही सब, बल्कि इससे ज़्यादा ही चाहती है कि उसे ऐसा घर मिले जहाँ उसकी चले, पूरी आज़ादी मिले, मायके की तरह प्यार मिले। पर बहू के मामले में उनकी थ्योरी सिर्फ़ थ्योरी ही होती है। प्रैक्टिकल में तो बहू से ढेर सारी अपेक्षाएँ होती हैं; न होने पर घर में क्लेश का वातावरण बन जाता है। तो ऐसी प्रवचनदाता सासुओं को क्या कहिएगा—"पर-उपदेश कुशल बहुतेरे।"

हाँ, मुझे विश्वास है

दुनिया से अनजान छोटी-सी जान...
माँ-पापा पर पूरी निर्भर-
जो कहते, कर लेती;
जो देते, खा लेती;
जो पहनाते, पहन लेती।
कहते-यह सही है-
आँखें बंद करके
पूरे भरोसे के साथ मान लेती,
क्योंकि मुझे विश्वास है
कि माता-पिता से ज़्यादा
आपका भला कोई नहीं चाहता।

बड़ी हुई, पढ़ाई के लिए स्कूल गई। शिक्षक मिले- जो किताबों के ज्ञान के साथ जीवन का ज्ञान भी देते थे। उस समय हमारे गुरु आत्मीयता से अध्ययन कराते थे। जो कहा, सो माना- क्योंकि मुझे विश्वास है कि गुरु कभी शिष्य का बुरा नहीं चाहते।

शादी करके जिस घर आई, उसे दिल से अपनाया। पति से बेशुमार प्यार, बच्चों की अपार ममता, बड़ों का आशीष- सब सहेजते जीवन की गाड़ी निर्बाध गति से चलती रही। सबका ख़याल रखते-रखते अपने सपनों का ध्यान ही न रहा। पर कभी किसी ने कुछ करने से रोका नहीं। मैंने अपने मन से जो किया, वह किसी को खला नहीं। मैं भी अपना सर्वस्व उन्हीं को समर्पित करती गई, क्योंकि मुझे विश्वास है कि उन्हें मुझ पर विश्वास है- कि मैं व्यस्त रहकर भी अपनी कलम से शब्दों को आकार दे ही दूँगी।

करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान

कबीरदास जी द्वारा लिखित यह दोहा हर उस व्यक्ति को हिम्मत देता है, जो मेहनतकश होने के बावजूद अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाते। इस दोहे में यही भाव है कि यदि एक ही कार्य को बार-बार किया जाए, तो वह कार्य निश्चित रूप से सफल होता है। जिस प्रकार पत्थर पर लगातार रस्सी का घर्षण होता रहे, तो पत्थर पर भी निशान हो जाते हैं—जो साधारण रूप से असंभव-सा लगता है।

यदि किसी काम को करने में प्रथम बार तकलीफ़ हो या समझ न आए, तो हार नहीं माननी चाहिए, क्योंकि पुनः-पुनः करने पर वही कार्य आपके लिए सरल हो सकता है अथवा आप उस कार्य में पारंगत भी हो सकते हैं। किसी कार्य को दुष्कर समझकर छोड़ देना निराशा देता है; इसके बजाय मेहनत और निरंतर अभ्यास से लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। अंग्रेज़ी में भी बचपन में इसी भाव की कविता हम सबने पढ़ी होगी—“ट्राय अगेन।”

वास्तविक पीड़ा

गर्मी की वास्तविक पीड़ा तो उन प्रवासी मज़दूरों से पूछो, जो इस समय अपने-अपने गाँव आने के लिए मीलों पैदल चल रहे हैं। न खाने-पीने का ठिकाना है, न थोड़ी ठंडक की आस। कोई वाहन हमें हमारे गंतव्य तक पहुँचा दे—इसी आस में बढ़ते जा रहे हैं, मानो ज़िद कर ली हो कि पहुँचकर ही मानेंगे। दूसरी ओर सूर्यदेव भी अपने प्रचंड ताप से उनकी परीक्षा कठिन किए जा रहे हैं; ऊपर से कोरोना का डर बना हुआ है।

हम खुशक़िस्मत हैं कि हमें भूख के लिए जद्दोजहद नहीं करनी पड़ती। परिस्थितियाँ विकट हैं, फिर भी हम अपने-अपने घरों में सुरक्षित हैं। पर रोज़ टीवी पर इन मज़दूरों का दर्द देखकर दिल दहल जाता है। सच में, ग़रीब होना ही सबसे बड़ी बीमारी है। न ग़रीबी होती, न दो जून की रोटी के लिए दर-दर भटकते ये मज़दूर।

यदि वापस न आएँ, तो शहरों में रोज़ी-रोटी के लाले; और लौट आएँ, तो प्रशासन का डंडा। महामारी से ग्रसित हों या न हों, भूख, प्यास और गर्मी से मौत के रू-बरू तो ज़रूर हो जाएँगे। ईश्वर उन्हें अपने-अपने गंतव्य तक पहुँचने की शक्ति और सही मार्ग प्रदान करे—यही भावना है।

जीत क्या है?

जीत क्या है? जीत कोशिशों का वह मीठा फल है, जिसे पाने में आनंद की अनुभूति होती है। परंतु फल खट्टे-मीठे भी हो सकते हैं, इसलिए कोशिश निरंतर होनी चाहिए। फल के स्वाद पर ध्यान न दें, क्योंकि जीत सिर्फ़ जीवन की परीक्षाओं से ही नहीं—पहले स्वयं की कमज़ोरियों पर प्राप्त करनी होती है।

हमें जीतना है—

क्रोध से,

लोभ से,

मान से,

द्वेष से,

माया से,

हिंसा से,

कलह से।

अपने भीतर छिपी हर बुराई से जीतना है, जो हमारी खूबियों को उभरने नहीं देती। तभी इस रंगमंच-रूपी जीवन के हर पात्र को हम सफलतापूर्वक निभा सकते हैं। यही जीवन जीने का सही तरीका है।

पल-पल बदलता जीवन

समय का स्वभाव है—वह सदा एक-सा नहीं रहता। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और जीवन में भी सतत बदलाव होता रहता है। जो काम कभी असंभव लगते थे, आज वही सरल लगते हैं। कुछ ज़ख़्म, जो कभी न भरने वाले लगते थे, आज सूखकर दिखाई भी नहीं देते। जो कल सच्चा मित्र था, विपरीत परिस्थितियों ने उसे दुश्मन बना दिया।

बड़े होते-होते जीवन की थ्योरी भी बदलती रहती है। बचपन में माँ की जो बातें चुभती थीं, आज माँ बन जाने पर उनके अनुभव की गहराई समझ आती है। यही तो है पल-पल बदलता जीवन। इसलिए याद रखें—कोई भी तकलीफ़ स्थायी नहीं होती। आज समय का बुरा पक्ष हमारी ओर है, कल अच्छा पक्ष आएगा। धैर्य रखें; जीवन की हर जंग संयम से जीती जा सकती है।

समय सृजन में लगता है, विसर्जन में नहीं

यथार्थ ही है—तोड़ना बड़ा सरल है, परंतु जोड़ना कितना मुश्किल है। आज के परिप्रेक्ष्य में तो यह चारों ओर दृष्टिगोचर होता है। एक-दूसरे को खुश रखने, सहेजने और संभालने में कितने पापड़ बेलने पड़ते हैं। साधारण-सी कलाकृति को आकार देने के लिए कई दिनों की मेहनत लग जाती है, पर उसी को तहस-नहस करना मिनटों का काम है। पर जिसे अपनों से प्यार होता है, वह रिश्तों के सृजन में विश्वास रखता है, न कि विसर्जन में।

वास्तव में सृजन उत्साह, प्रेम और निष्ठा का परिणाम है, वहीं दूसरी ओर विसर्जन अवसाद, द्वेष और क्रोध का। भावों की तरतमता ही कभी बनाती है, तो कभी नष्ट करती है। पर जो आनंद बनाने में है, वह बिगाड़ने में नहीं। फ़ैसला हमें ख़ुद करना है कि हमें किसमें रुचि है—सृजन में या विसर्जन में।

पर्वाधिराज पर्युषण : एक परिचय

आज हम जैनों का महापर्व—पर्वाधिराज पर्युषण—का अंतिम, परंतु अत्यंत महत्वपूर्ण संवत्सरी अर्थात् क्षमापना दिवस है। आज के दिन सभी जैन पूरे लोक की 84 लाख जीव-योनियों से क्षमा माँगते और क्षमा करते हैं। इसे हम आठ दिन मनाते हैं।

यह बड़ा अनोखा पर्व है। आज जहाँ कई पर्व खाने-पीने और मौज-उड़ाने तक सीमित हो गए हैं और खर्च की चिंता बढ़ा देते हैं, वहीं यह पर्व सादगी से भरा, पापों से रहित है। सभी राग, द्वेष, क्रोध, मान और माया को जीतकर आत्मा को ऊर्ध्वगामी बनाने की यह एक कोशिश है। साल-भर में हमारे द्वारा किसी भी छोटे-बड़े, दिखने-न-दिखने वाले, घर के, बाहर के, जाने-अनजाने किसी भी जीव को मन, वचन अथवा काया से यदि किंचित् मात्र भी परिताप (दुःख) पहुँचाया हो, तो उन जीवों से क्षमा माँगी जाती है।

यह पर्व अपनी क्षमता का अवलोकन, इंद्रियों पर नियंत्रण और स्वयं को कसौटी पर कसने का अपूर्व अवसर है, इसलिए इसे पर्वों का राजा कहा जाता है। इन दिनों में जैन शास्त्रों का वाचन, ज्ञान-ध्यान और पापों की आलोचना की जाती है। इन आठ दिनों में हरी वनस्पति का त्याग तथा रात्रि-भोजन त्याग विशेष रूप से किए जाते हैं। अंतिम, यानी संवत्सरी के दिन उपवास आदि से अपनी आत्मा को भावित करते हुए सभी बड़े-छोटे, अपने-पराये से साल-भर में अपने द्वारा की गई भूलों की माफ़ी माँगी जाती है। दुश्मन को भी गले लगाया जाता है और आत्मा को हल्का बनाया जाता है। ऐसा है यह महापर्व।

इसी कड़ी में मेरे द्वारा भी यदि आप में से किसी भी व्यक्ति को किंचित् मात्र भी दुःख पहुँचा हो, तो इस पावन पर्व पर मैं मन, वचन और काया से बार-बार क्षमाप्रार्थी हूँ। आप सब क्षमा करें।

प्रिय 2021

बहुत-बहुत स्वागत। जैसा कि सभी को विदित है कि तुम्हारा हमसाया 2020 बहुत-सी कटु यादों के साथ समाप्त होने जा रहा है। तुम्हारी तरह उसका स्वागत भी हमने बड़े हर्षोल्लास के साथ किया था। सोचा था नया वर्ष नई उम्मीदें और नए सपनों को पूरा करने वाला होगा, पर पूरा वर्ष खेद में ही निकल गया। यह बात अलग है कि इस आपदा के समय को भी कुछ सृजनकर्ताओं ने नए-नए आविष्कार कर अवसर बना दिया। उसी कड़ी में हम अंतरा परिवारवालों ने भी नए-नए सृजन किए, जिससे आप भी भली-भाँति परिचित होंगे।

इसी तरह दुख की घड़ी में सभी ने सुख ढूँढने का प्रयास किया। परिवार वालों को आपस में समय बिताने का मौका भी मिला, पर आसपास के लोगों को हो रहे कोरोना संक्रमण के दुःख से मन व्यथित भी हुआ। हर वर्ष की तरह आपका स्वागत भी बहुत बड़े उल्लास और उम्मीदों से करेंगे। आशा ही नहीं, विश्वास है कि आपका आगमन पिछले साल की सारी कड़वाहट समाप्त कर देगा। कोविड के खात्मे के साथ ही देश में आई अनेक विषम परिस्थितियाँ भी सामान्य हो जाएँगी। देश फिर से नए आयामों को छुएगा और सुख-संपन्नता व सौहार्द्रता की लहर फिर से हर गली-हर घर में पहुँचेगी। इसी आशा के साथ आपकी बाट जोहती मैं...!

घर की अर्थव्यवस्था में महिलाओं का योगदान

घर सँभालने वाली महिलाएँ वास्तव में कुशल गृहिणी होती हैं। उन्हें पता होता है कि किसकी क्या ज़रूरतें हैं, क्या ख़्वाहिशें हैं। दिन-रात अपने चौबीस घंटे वाले जॉब में लगी रहती हैं—न कोई छुट्टी, न कोई ब्रेक। जब जिसको जो काम हो, हमेशा तैयार। एक पुरुष भी जो कला नहीं जानता, वह ये महिलाएँ भली-भाँति जानती हैं। तभी तो एक महिला का घर पर न होना पूरे घर का हुलिया बिगाड़ देता है। अपने कुशल संचालन से घर को स्वर्ग-सा सुंदर बना देना भी इनके हुनर का हिस्सा है।

घर में क्या ख़त्म हुआ, क्या काम है, किसकी ज़रूरत नहीं है—सब कुछ इन्हें पता होता है। ये घर की हर नब्ज़ से वाक़िफ़ होती हैं। घर के बजट को सुचारु रुप से चलाना तो इनके डी.एन.ए. में होता है। जैसे गर्भ से ही संस्कार लेकर आती हों कि चारदीवारी को घर कैसे बनाना है, एक निश्चित आय में घर कैसे चलाना है और फिर बचत भी करनी है। हम सभी ने अपनी मम्मियों को देखा है कि कैसे सबकी आवश्यकता पूरी करके भी मुसीबत के वक़्त न जाने कहाँ से अलादीन का चिराग घिसकर पैसा ले आती हैं और कहती हैं—चिंता मत करो, मेरे पास है। यह हुनर लगभग हर महिला में होता है, जो अपनी जमापूँजी को मुश्किल वक़्त के लिए सँभालकर रखती है, ताकि कभी भी घर की अर्थव्यवस्था पर आँच न आए। ऐसे ही थोड़े ही उन्हें होम-मिनिस्टर कहा जाता है।

पढ़े फ़ारसी, बेचे तेल

कोरोना काल में तो यह मुहावरा प्रायः दृष्टिगोचर होता है। बड़े-बड़े कॉलेजों से पढ़े, वर्षों पढ़ाई में समय देने वाले, माँ-बाप की मेहनत के बल पर कुछ बनने वाले विभिन्न संकायों के इंजीनियर सुबह ऑफिस जाते हैं और शाम को उनका जॉब उनके हाथ में नहीं रहता। कोई भरोसा नहीं कि कब तक आप इस नौकरी में बने रहेंगे। मजबूरीवश उन्हें वापस आकर अपना पुश्तैनी काम करना पड़ रहा है—चाहे वह खेती-बाड़ी हो अथवा किराना, मनिहारी आदि।

कहने का तात्पर्य यह है कि "पढ़े फ़ारसी, बेचे तेल" यह मुहावरा इन लोगों के जीवन में आए इस पतन को भली-भाँति व्यक्त करता है। ऐसे ही बहुत पढ़-लिखकर भी कई ऐसी स्त्रियाँ हैं, जो या तो पिता के दबाव में अथवा पति के सहयोग के अभाव में सिर्फ़ चूल्हा-चौका तक सीमित रहकर अपनी प्रतिभा से समझौता करती हैं। आत्मा तो सबकी रोती है, पर क्या करें—मुहावरा मानो इन्हीं के लिए बना हो। जीवन बन जाता है खेल, योग्यता ज़्यादा, काम बेमेल।

बदलते मौसम और बदलते रिश्तों का जीवन पर प्रभाव

आज का युग मशीनों का युग है और इसके चलते इंसान भी मशीन हो गया है। कहाँ दिन होता है, कहाँ रात—पता ही नहीं चलता। दिन-भर भाग-दौड़ करता इंसान रिश्तों को समय दे ही नहीं पाता। परिणामस्वरूप एकल अथवा टूटते परिवार दृष्टिगोचर होते हैं। कहते हैं कि यह सब काल का प्रभाव है। एक समय मानव कृषि करना तक नहीं जानता था, पर आज की अपेक्षा शायद ज़्यादा सुखी था। इतना तनाव तो नहीं ही होता होगा।

आज सुख-सुविधाओं का तो अंबार लगा है, पर फिर भी समय का अभाव है। बड़े-बुज़ुर्ग तो दो मीठे बोल के लिए तरस जाते हैं। कोई उनके पास बैठे—इसके लिए दिन-भर इंतज़ार करते हैं। संवेदनाएँ तो प्रायः समाप्त-सी हो गई हैं। किसी के सुख-दुःख से कुछ ख़ास लेना-देना नहीं, बस स्वार्थ-पूर्ति में लगा इंसान सही-गलत से भी परे हो गया है, जो परिवार, समाज और देश के लिए ख़तरनाक है।

उस पर आज का बदलता मौसम—कभी अतिवृष्टि, कभी अनावृष्टि, तो कभी जला देने वाली गर्मी—पर्यावरण का संतुलन बिगाड़ देता है। अभी तो सारा देश कोविड-19 से जूझ रहा है। वैश्विक संकट की इस घड़ी में लोगों के रोज़गार छिन गए, धंधे चौपट हो गए। आपसी प्रेम को कम कर स्वार्थ को पोषित करने के कारण लड़ाई-झगड़े और लूट-पाट दिनो-दिन पनप रहे हैं।

माना कि समय बहुत कठिन है, पर सभी को धैर्य रखना होगा। यह जो समय मिला है, उसे स्वयं के आकलन, पारिवारिक सौहार्द और व्यक्तित्व-विकास के लिए उपयोग करना चाहिए। शायद प्रकृति ने अपने नवनिर्माण का एक अवसर दिया है। जागरूक बनें, सतर्क रहें, सुरक्षित रहें।

धुएँ में समाप्त होता युवा वर्ग

राष्ट्र का भविष्य जिनके हाथों में है, क्या वह युवा वर्ग उस ओर कुछ प्रयास कर भी रहा है? नहीं। आज का युवा तो अपनी मस्ती में मस्त, सही-गलत से परे, अपने स्वार्थ से ओतप्रोत, नशे की लत की ओर तेज़ी से अग्रसर हो रहा है। अमीर-गरीब का भी कोई सीमांकन नहीं रह गया है। स्कूल, कॉलेज, कोचिंग क्लासेस—सभी जगह पढ़ाई हो न हो, नशीली चीज़ों का व्यापार धड़ल्ले से पैर पसार रहा है और धुएँ में समाप्त होता हमारा युवा दिखाई दे रहा है।

नशा सिर्फ़ एक बुराई नहीं है, अपने साथ अनेक बुराइयों का जन्मदाता है। एक नशा न जाने कितने बड़े-बड़े गुनाह भी करवा देता है और एक झूठ को छुपाने के लिए अनेक झूठ बोलने पड़ते हैं।

बड़ी विडंबना है कि दिन-दूनी रात-चौगुनी होती इस नशे की लत से छुटकारा पाने के लिए किसी स्तर पर कोई ठोस प्रयास नहीं हो रहे। सरकार भी नियम तो बनाती है, पर भ्रष्टाचार उन सबको निगल जाता है और खुद सरकार नशीले पदार्थों को हानिकारक बताकर भी उसके बाज़ार को कम नहीं कर पा रही है।

ज़रूरत है देश के भविष्यकर्ता बनने वाले इन युवाओं को अपना भला-बुरा समझने की। सिर्फ़ कुछ समय के मज़े-मौज के चलते अपना जीवन दाँव पर लगाने वालों को सावधान और संयमित तो रहना ही होगा, वरना हम ही अपनी दुर्गति का कारण बन जाएँगे। दिन दूर नहीं।

सरकार को भी स्कूल, कॉलेज आदि विभिन्न संस्थानों में इसकी रोकथाम का कड़ाई से पालन करवाना चाहिए। पालकों को भी थोड़ा सतर्क होने की आवश्यकता है। सभी के साझा प्रयास निश्चित ही अच्छे परिणाम दे सकते हैं।

जहाँ चाह वहाँ राह

अपनी खुशियों की चाबी अपने हाथ में ही होती है। हम यदि किसी निर्णय को मजबूती से लें, तो किसी की इतनी हस्ती नहीं कि आपकी मंज़िल में बाधा बन सके। हम ख़ुद ही अपने भाग्य के निर्माता बन सकते हैं, बशर्ते कि पुरुषार्थ भरपूर हो।

केवल भाग्य के भरोसे बैठे व्यक्ति को खाना मिल भी जाए, परंतु खाने का पुरुषार्थ किए बिना क्या उसका पेट भर सकता है? नहीं न। बस यही हमारे कुछ कर गुज़रने की चाहत ही हमें कुछ नहीं से सब कुछ बना देती है, क्योंकि जहाँ चाह वहाँ राह होती है।

फिर निकम्मे-नाकारे व्यक्ति के पास तो बहानों की कमी भी नहीं होती, पर यह तो निश्चित है कि वे ख़ुद अपने-आप को धोखा देते हैं और अपनों को भी। काम वही सफल होता है, जो मन से किया जाए। इसलिए सदा अपने हर काम को मन लगाकर करें, तो कभी असफलता का सामना नहीं करना पड़ता।

बचपन से ही कुछ नया करने की शौकीन मैं छोटेपन में ही अपनी आत्मकथा लिखने लगी। भाई-बहनों ने मज़ाक उड़ाया और मेरा लिखना थम गया। फिर काफ़ी सालों के बाद भजन बनाना शुरू किया और बनाती चली गई।

प्रीति, जो मेरी देवरानी कम, दोस्त ज़्यादा थी, मुझे लिखने के लिए हमेशा प्रेरित करती रहती। पर मैंने ध्यान देने में देर कर दी। ख़ैर, देर आए दुरुस्त आए। आख़िर लिखना शुरू किया। लिखते-लिखते कब मैं अंतरा का हिस्सा बन गई, पता ही नहीं चला।

आपातकाल का यह समय, जो वाक़ई में मुश्किल का समय है, इसने तो मेरे लेखन को नई दिशा दी। उस पर अंतरा का मंच और प्रीति-सा मार्गदर्शक भी। फिर क्या था—कलम गतिमान हुई। नित्य-प्रति नए विषय, मेरे मन में विचारों का ज्वालामुखी-सा उठता और एक नई रचना जन्म ले लेती।

इस विश्व संकट में हम सब देश और क़ानून व्यवस्था के साथ हैं। हमारी सभी रचनाएँ इन्हीं भावों से ओतप्रोत हैं। धन्यवाद प्रीति को, जिसने मुझे मुझमें छिपे लेखक के दीदार कराए और इस अंतरा मंच को भी आभार, जिसने मुझे अपने परिवार के सदस्य के क़ाबिल समझा।

नारी बनी सबकी रक्षक

कोरोना ने संक्रमित किया, बना कईयों का भक्षक,
आगे आकर ध्यान रखे, ये नारी बनी सबकी रक्षक।

आज जहाँ चारों दिशाएँ महामारी के कोहराम से आतंकित हो रही हैं और सारी सरकारें, क़ानून व्यवस्था तथा सभी सुरक्षा कर्मी अपनी-अपनी भूमिका को बखूबी निभा रहे हैं, वहीं घर-गृहस्थी सँभालने वाली एक साधारण-सी दिखने वाली महिलाएँ भी कहाँ कम हैं। वे भी इस कर्म-यज्ञ में कमर कसकर अपनी आहुति दे रही हैं।

वैसे तो कोई काम ऐसा नहीं है, जो नारी ठान ले तो पूरा न कर पाए। मौजूदा परिस्थिति से निपटने के लिए भी सभी महिलाएँ अपने-अपने स्तर पर प्रयासरत हैं। जो घर तो ज़िम्मेदारी से सँभालती ही हैं, परिवार, समाज और देश के प्रति अपना कर्तव्य भी भली-भाँति समझती हैं।

वे घर के सदस्यों को समय-समय पर सुरक्षा सावधानियों के प्रति सजग करती हैं, घर से निकलने पर कड़ी मनाही करती हैं, साथ ही घर की अर्थव्यवस्था भी सँभाल रही हैं। कम सामान में भी कैसे गुज़ारा किया जाता है, भारतीय नारी अच्छी तरह जानती है।

घर में लंबे समय तक रहकर ऊब होने पर सबके मनोरंजन का ख़याल भी उसी को रखना है। वही दिन-भर सबके पसंदीदा व्यंजन बनाने में भी कहाँ पीछे है। बर्तन, कपड़ा, झाड़ू-पोंछा—सबका किरदार भी हँसकर निभा रही है।

अपने आसपास के क्षेत्रों में भी सभी लोगों में सामाजिक दूरी बनी रहे, इस विषय में कार्यरत है। अपनों का ध्यान रखने के साथ-साथ अपने आसपास जो परिवार अभाव में गुज़र-बसर कर रहे हैं, उनके भरण-पोषण की ज़िम्मेदारी भी अपने कंधों पर ली हुई है। और विश्व के सभी जीव इस महामारी से लड़कर विजय प्राप्त करें—इस आशा के साथ अंतर्मन से प्रार्थना भी करती है।

कहने का तात्पर्य यह है कि माँ, बहन, बेटी, बहू, पत्नी होने के साथ-साथ वह एक सच्ची देशभक्त के रूप में भी दृष्टिगोचर हो रही है।

आज की पीढ़ी

दादी-नानी अब बच्चों को पहले जैसी कहानियाँ नहीं सुनातीं। कुछ तो इसलिए कि आज की पीढ़ी को कहानियाँ सुनने की रुचि ही नहीं है और दूसरा, दादी-नानी भी समय के साथ आधुनिक होकर कहानियाँ भूलती जा रही हैं। फलस्वरूप बच्चे अपनों के साथ समय बिताने की बजाय मोबाइल, टीवी चलाना ज़्यादा पसंद करते हैं। इस आधुनिक संस्कृति के चलते आपसी प्रेम और आदर की भावनाएँ लुप्त होती जा रही हैं, जो बहुत ही सोचनीय विषय है।

पहले जब माँ, दादी, नानी कहानियाँ सुनाती थीं, तो उसमें भावनाएँ तो होती ही थीं, साथ ही एक सीख भी होती थी, जो बच्चों में बीज-रूप में रोपित होती और ताउम्र उन्हें सत्कार्य की प्रेरणा देती थी। पर आज की पीढ़ी तो बड़ों के पास बैठना ही नहीं चाहती। उन्हें लगता है, बड़ों के पास बैठकर ज्ञान के अलावा क्या हासिल होगा, जो उन्हें मोबाइल में ही मिल जाता है।

आपसी दूरियों की कुछ वजह हम बड़े भी हैं, जो बच्चों से अपेक्षाएँ तो बहुत करते हैं, उन्हें एक आदर्श व्यक्तित्व बनाने के चक्कर में कब उनसे दूर हो जाते हैं, पता ही नहीं चलता। जबकि आज के बच्चे बड़ों में दोस्त, हमराज़ और उनकी तरह ही सोचने वाला ढूँढते हैं, जो उन्हें टोके ही नहीं, उनकी रुचियों में सहभागिता भी दिखाए। तभी बच्चे बड़ों से दूर भागने की बजाय हमें अपना दोस्त मानकर हर बात हमसे साझा करेंगे।

पीढ़ी आज की बदल गई,
करती है वो मनमानी।
दादी-नानी से उन्हें तो,
नहीं सुननी है कहानी।
मोबाइल में अपडेट रहे वो,

रिश्तों से अपसेट।
दूरी बनाते अपनों से वो,
उन्हें चाहिए नेट।
लाना पास यदि बच्चों को,
बनकर हमउम्र बात करो।
रोका-टोकी करते रहते,
दुविधा उनकी प्रथम हरो।
बड़े बनने से पहले,
साथी उनके बन जाओ तुम।
निश्चित रिश्ते पनपेंगे फिर,
बाटेंगे खुशियाँ और ग़म।

आपदाकाल में जीवन प्रबंधन

संसार के सभी प्राणी सुख चाहते हैं, कोई भी दुखी रहना नहीं चाहता। परंतु संपूर्ण विश्व जिस संकट से जूझ रहा है, उसके चलते सभी की सुख-सुविधा में निश्चित ही कमी आई है। घर से बाहर निकल नहीं सकते, घूमना-फिरना रुक गया है, मन-चाहा खा भी नहीं सकते, क्योंकि सभी चीज़ों पर कुछ हद तक प्रतिबंध लगा है, क्योंकि ज़रूरी सामान की आवाजाही सामान्य दिनों से बहुत कम है।

अब ऐसे समय में, जब कम सामान में गुज़ारा करना है, तो प्रबंधन तो निश्चित ज़रूरी है। क्योंकि आज हम अपने चारों ओर देखें तो देश में इस महामारी के चलते हर चीज़ के उत्पादन में कमी आई है, जिसके कारण ज़रूरी वस्तुएँ आम आदमी तक पहुँचना मुश्किल हो गया है। कितने घरों में तो चूल्हा भी बड़ी मुश्किल से जलता है। तब देश के हर नागरिक को चाहिए कि वह अपने घर में कोई भी खाद्य सामग्री बर्बाद न होने दे। सुबह का शाम खा लें, कुछ दिनों तक अच्छे पकवानों के विचार छोड़ दें, किसी भी ज़रूरत की वस्तु का ज़्यादा स्टॉक करके न रखें। क्योंकि आपके पास निश्चित ही पैसा बहुत है, पर कई लोग ऐसे भी हैं जिन्हें अत्यंत ज़रूरत की सामग्री भी नहीं मिल पा रही।

बच्चों को भी नियमित संसाधनों में काम चलाना सिखाएँ, पैसे का मूल्य समझाएँ, ताकि बच्चे फ़िज़ूलखर्ची से बचें। और जितना हो सके अपने आसपास कोई ज़रूरतमंद हो तो उसकी मदद ज़रूर करें। घर पर रहकर सभी सदस्य अपना-अपना काम बाँट लें, ताकि किसी एक व्यक्ति पर घर का सारा बोझ न आ जाए। सब मिलकर समय बिताएँ, खेलें, खिलाएँ। मनोरंजन के अनेक साधनों का उपयोग इस समय किया जा सकता है। साफ-सफाई का ख़ास ख़याल रखें। बड़े-बुज़ुर्गों का भी विशेष ध्यान रखें।

बुरा समय है, ये भी निकल जाएगा। तो घर पर रहें, स्वस्थ रहें, ज़रूरतमंदों की मदद ज़रूर करें, क्योंकि दान कभी खाली नहीं जाता और लोगों की दुआ भी।

पीहर बहुत याद आता है।

परीक्षाओं के बाद पीहर जाने की आस जगने लगती है। कब-कब छुट्टियाँ हों और मायके की तैयारी करें। बच्चे भी नाना-नानी के घर जाने को उत्सुक। सुहाने सपने—मम्मी, पापा, भाई, भाभी, भतीजे—के साथ 15-20 दिन बिताने की खुशी। सब बहुत याद आता है।

मन-मुताबिक रहने का अरमान, देर तक सोने और बिना ज़िम्मेदारी बैठे रहने का स्वर्णिम अवसर। बहनों से मिलने का मौका, जिसका रास्ता कब से देखा जाता है। उनके साथ नई-नई चीज़ों की ख़रीददारी और घर आकर उन चीज़ों को देखकर खुश होना—सब बहुत याद आता है।

मम्मी का रोज़ पूछना—क्या खाओगे। सबका प्यार-दुलार। रोज़ का नया कार्यक्रम—कहाँ जाना है, आज क्या करना है। पतिदेव का फ़ोन पर पूछना—कब आओगी—और उनके तड़पने के क्या कहने। फिर आख़िरकार बिना मन वापसी की तैयारी।

सच, पीहर बहुत याद आता है। अब तो बस फ़ोन पर ही बात हो पाती है। इस बार पता नहीं वहाँ जाने का ये शुभ अवसर प्राप्त भी होगा या नहीं, क्योंकि आज कोरोना रूपी महाकाल घर से बाहर निकलने में बाधक बना हुआ है। पर कोई बात नहीं, सब कुछ जल्दी ठीक हो जाएगा। पीहर तो बाद में भी जाया जा सकता है। सब पता है मुझे... पर पीहर तो पीहर है, याद बहुत आता है।

वैचारिक बदलाव ज़रूरी है

जब बात देश के वजूद की हो, धार्मिक, राजनीतिक—सभी क्षेत्रों में वैचारिक बदलाव निश्चित ही ज़रूरी है। क्योंकि हमेशा इन वैचारिक मतभेदों की क़ीमत साधारण और मासूम जनता को ही चुकानी पड़ती है। आज भी जहाँ विश्व-स्तर पर एकजुट होकर महामारी का सामना किया जा रहा है, तब भी कुछ महानुभाव अपने कुविचारों से किन्हीं वर्ग-विशेष में अराजकता फैला रहे हैं। अरे, ये समय मिलकर दुश्मन से लड़ने का है, न कि आपस में लड़ने का।

अभी तो पहले अपने और देश के अस्तित्व की रक्षा करना ज़रूरी है। ज़िंदगी बची तो आपसी मतभेद बाद में हो जाएँगे। दुनिया-भर में हमारी नीतियों और समय रहते निर्णय लेने की क्षमता की प्रशंसा हो रही है, पर नहीं—हमें तो अपने स्वार्थ के आगे कुछ दिखता ही नहीं है, देश जाए भाड़ में।

बुद्धिजीवियों को क्यों नहीं दिखता कि कितने लोग अपनी जान पर खेलकर देश की रक्षा कर रहे हैं, बिना वैचारिक मतभेद के—बस देश को बचाना ही उनका उद्देश्य है। क्या उन्हें अपनी जान प्यारी नहीं है? क्या उनके परिवार के लिए उनकी कोई क़ीमत नहीं है? कुछ तो उस ओर देखिए और उनकी कुछ तो क़ीमत समझिए।

अपनी धार्मिक व राजनीतिक विषमता को परे रख, देश-हित को सर्वोपरि मानकर आए बुरे वक़्त से डटकर सामना करें, तो जीत निश्चित ही हासिल की जा सकती है। ध्यान रहे कि देश-हित में ही निज-हित समाविष्ट है। वैचारिक बदलाव लाना बहुत ज़रूरी है। याद रखना होगा कि वर्तमान समय में स्वस्थ जीवन ही बहुत बड़ी उपलब्धि है। अपने, अपने परिवार, समाज और देश का ध्यान रखें। स्वस्थ रहें, सुरक्षित रहें, घर पर रहें।

डर के आगे जीत है — सत्य घटना

बहुत समय पहले की बात है। हर साल नानी के यहाँ गर्मी की छुट्टियाँ मनाने जाने का प्रचलन हमारे बचपन में भी था। बड़े चाव से, कभी-कभी बिना मम्मी के भी नानी के घर पहुँच जाते थे। नानी थोड़ी तेज़ स्वभाव की होने के कारण मैं उनसे बहुत डरती थी। थोड़ी भी डाँट पड़ी कि बाथरूम में जाकर नल चालू करके रोने लग जाती थी। पर मामी समझदार थीं, वे सब बच्चों को बहुत प्यार से रखती थीं। यूँ ही समय गुज़रता जाता था। कभी होटल तो कभी पिकनिक जाने का भी अलग ही मज़ा था।

एक बार पड़ोस की मामी के बच्चों के साथ पिकनिक पर बगीचा जाने का प्रोग्राम बना। वे तीन भाई-बहन और हम लोग सब तय स्थान पर पहुँच गए। उस बगीचे में नदी भी थी, जिसमें बोटिंग होती थी। नदी के बीच टापू भी था। सबने उसी टापू पर जाकर खाना खाने का विचार बनाया। खाना होने के बाद सब हाथ धोने टापू के निचले भाग में आए। बाजू वाली मामी की बेटी नेहा और मैं आगे-पीछे ही हाथ धो रहे थे।

उसने जैसे ही हाथ धोए, उसके पैरों के नीचे की मिट्टी खिसक गई और वह नदी में डूबने लगी। मैं भी घबरा गई। थोड़ा आगे बढ़कर उसे निकालूँ, तो मेरे पैरों के नीचे की मिट्टी भी सरक रही थी। धड़कन इतनी तेज़ बढ़ने लगी—कहीं उसे कुछ हो न जाए। उसकी मम्मी-पापा को क्या जवाब देंगे। डर की तो कोई सीमा ही नहीं थी। क्या करूँ, किसे बुलाऊँ। फिर हिम्मत करके धीरे-धीरे पैर रखकर आगे बढ़ी, नेहा को हाथ दिया और उसे ऊपर खींचने की कोशिश करने लगी। मिट्टी भी अपना काम कर रही थी—सरकने का। पर हमारी हिम्मत से हार गई। धीरे से नेहा ऊपर आ गई। मेरी जान में जान आई। सबने भी चैन की साँस ली।

सच ही कहते हैं—डर के आगे जीत है।

दुनिया है दिलवालों की

जब ज़िंदगी की राह में लगता है कि बहुत मुश्किलें आ रही हैं, आगे बढ़ा नहीं जाएगा, तब कहीं से उम्मीद की किरण किसी ओजस्वी व्यक्तित्व के दर्शन करा ही देती है। जो हिम्मत से भरपूर, प्रयासों का जीता-जागता उदाहरण, विफलता में से सफलता खोज निकालने वाला, जीवन से ओत-प्रोत होता है। ऐसा नहीं है कि उसने विफलता न देखी हो या निराश न हुआ हो, या उसकी परीक्षाएँ न हुई हों। पर इन सब से ऊपर उठकर ख़ुद तो जीता ही है, दूसरों के अंतर में भी कुछ कर गुज़रने का हुनर भर दे। ऐसे व्यक्तित्व की भी इस दुनिया में कमी नहीं है।

वह प्रेरणा है हर उस शख़्स की, जो जीवन के इस युद्ध में हथियार डाल चुके हैं, हार मान चुके हैं। अरे, वह व्यक्ति जो किसी कारण अपने शरीर का कोई अंग गँवा चुके हैं, वे भी अपने लिए नए आयाम खोज लेते हैं। तो हमें तो ईश्वर की कृपा से सब कुछ अच्छा मिला है—क्यों न इसकी क़द्र करें। ये दुनिया दिलवालों की है, रोते रहने वालों को यहाँ कोई नहीं पूछता। ज़िंदगी को ज़िंदादिली से जीते हैं, अपने ग़मों को खुशियों की सुई से सीते हैं। ये दुनिया तो है दिलवालों की—तकलीफ़ में हँसते और हर ग़म को हँसकर पीते हैं।

महिला दिवस पर विशेष

प्यार बाँटती हुई नारी,
हक़ जताती हुई नारी,
रूठकर मान जाती हुई नारी,
हर किरदार में समाती हुई नारी।
ख़ुद को आज़माती हुई नारी,
सबके लिए वक़्त बिताती हुई नारी,
सुख-दुख में साथ निभाती हुई नारी,
कभी-कभी ख़ुद को भुलाती हुई नारी।
रिश्तों को सफलता से चलाती हुई नारी,
परिवार को मुश्किलों से बचाती हुई नारी,
माँ, बेटी, बहन, बहू—
हर रिश्ते की शोभा बढ़ाती नारी।
आप भी नारी, मैं भी नारी।

आज तक दुनिया और रिश्तों को समझने वाली नारी अब बदलना चाहती है। अपना अस्तित्व ढूँढना चाहती है। ख़ुद को भी समय देना चाहती है। जीना चाहती है। मनमानी भी करना चाहती है। बच्चा बनना चाहती है। कुछ पल सभी ज़िम्मेदारियों, चिंताओं से दूर आत्म-मंथन, आत्म-चिंतन और कुछ नवीन सृजन करना चाहती है।

तो क्या जी लें कुछ पल अपनी मर्ज़ी से, अपने अनुकूल? अरे, ये पूछना भी क्यों पड़ता है हम नारियों को। हाँ, जानती हूँ—ये संस्कार हैं, अनुशासन हैं, पारिवारिक रीतियाँ हैं, जो निभानी होती हैं। तो निभाते हैं न। हम तो नियम से हटकर भी नियम पालने वाली नारियाँ हैं। स्वतंत्रता में भी ख़ुद को ख़ुद ही क़ैद करने की आदत है हमारी। मनमानी करते हुए भी अपनी सीमा याद रहती है हमें। ज़िम्मेदारियों से दूर भी हर एक ज़िम्मेदारी की डायरी मस्तिष्क में लिए घूमती हैं और समय-समय पर पन्ने पलटकर ख़ुद ही दोहराती हैं। चैन से हम रहती कहाँ हैं, क्योंकि हम रिश्ते बनाते ही

नहीं—उन्हें जीते भी हैं। इसलिए रिश्तों से हम नहीं, हमसे रिश्ते हैं। कोई सजावट, कोई बनावट, कोई दिखावा, कोई छलावा नहीं—ये हमारी रूह में बसा हुनर है। और ये हमारी ख़ुशनसीबी है कि ईश्वर ने ये नेमत हमें प्रदान की है। मुझे गर्व है कि मैं स्त्री हूँ। अंत में कुछ पंक्तियाँ—

मैं नारी हूँ, नारीत्व का साथ,
सामान रखती हूँ।
क्या करना है, नहीं करना—
इसका भी भान रखती हूँ।
यूँ तो अनमोल हर रिश्ता,
आँच गर आन पर आए,
हर रिश्ते से फिर ऊपर मैं
अपना सम्मान रखती हूँ।

समय किसी के लिए रुकता नहीं है!

जीवन के इकतालीस सावन देख चुका मेरा जीवन अनेक उतार-चढ़ाव से भरा रहा। और ऐसे अनेक अनुभव हुए, जिन्होंने सिखाया कि समय किसी के लिए रुकता नहीं। चाहे सुख हो अथवा दुख, वह चाहे जितने समय अपना असर दिखाए, पर वह स्थायी कभी नहीं रहता। समय सदा गतिमान रहता है।

हाँ, ये बात अलग है कि खुशियों से भरा समय जल्दी बीत जाता है और दुख से भरा समय रुका-सा लगता है। ये हमारे मन की सोच है। समय की इस गति ने कितने ही लोगों को आसमान-सी ऊँचाई दी, तो अनेकों को धरती पर ला पटका। समय किसी का सगा नहीं होता। आज किसी का है, तो कल किसी और का।

इसलिए अपनी काबिलियत, उन्नति, रूप-रंग, जवानी आदि पर गुमान न करते हुए अपने जीवन को परोपकार व धर्म में लगाएँ, क्योंकि यही वह धरोहर है, जो हमारे बाद भी हमारे साथ रहती है। और हमारे कीमती समय का सदुपयोग भी एकमात्र यही है।

जीवन जिया और मर गए—क्या बस यूँ ही ज़िंदगी का समय ख़त्म कर दिया? नहीं। समय की क़ीमत करना हो और संभालकर उपयोग करना हो, तो सबसे सही है—धर्म और परमार्थ।

स्त्री...!

ये शब्द कानों में पड़ते ही माँ, बहन, बेटी, पत्नी, बहू—सारे किरदार ज़ेहन में आ जाते हैं। अनेक ग्रंथ स्त्री की महिमा से भरे पड़े हैं। समय-समय पर स्त्री सशक्तीकरण के अनेक आयोजन होते हैं और क़ानून बनते रहते हैं। पर यथार्थ के धरातल पर तो स्त्री को अपनी सुरक्षित एवं सशक्त छवि बनाने में बहुत वक़्त है।

ऐसा नहीं है कि कोई प्रयास ही नहीं कर रहा है, पर कई तबके ऐसे हैं जिन्हें स्त्री के पुरुषों से आगे बढ़ने या सफल होने में बहुत ऐतराज़ है। बड़े शर्म की बात है कि उनमें हमारी कुछ माताएँ-बहनें भी शामिल हैं। कहने का तात्पर्य यह कि नारी ही नारी की दुश्मन बन रही है।

जहाँ पुरुषों को नए-नए अवसरों के लिए योग्य समझा जाता है, वहीं हमारा स्त्री-वर्ग भी तो अपने-आप को सिद्ध करने में किसी भी क्षेत्र की मोहताज नहीं है। बात स्वयं की आंतरिक योग्यता को पहचानकर उसे निखारने की आवश्यकता है। समाज के दृष्टिकोण को थोड़ा चमकाना भी ज़रूरी है। नारी को नारी की शक्ति बनना चाहिए, न कि बैरी।

यूँ तो नारी सशक्तीकरण हेतु पहले भी प्रयास किए जा चुके हैं और अनेक संस्थाएँ इस ओर प्रयासरत हैं। परंतु आए दिन स्त्री पर होते बलात्कार, दहेज के लिए प्रताड़ना, कार्यक्षेत्र में उनकी अवहेलना आदि से मन व्यथित हो जाता है। आवश्यकता है और कठोर नियम-क़ानूनों की एवं समाज के हर वर्ग की सजगता और चेतना की, ताकि स्त्री पर कोई तरेरती आँखें प्रहार ही न कर सके।

हर बढ़ती बेटी को अवहेलना नहीं, प्रोत्साहन मिले—जैसे बेटे को मिलता है। हर बेटी पढ़े और खूब आगे बढ़े। इस क़ाबिल बने कि कोई उसे अपनी जागीर न समझे। ख़ुद तो समर्थ बने और हर बढ़ती बेटी का हमसाया बने। और इस प्रयास को अपने घर से ही शुरू करना होगा, क्योंकि हम बढ़ेंगे तो देश बढ़ेगा। नारी शक्ति को सलाम।

दुश्मनी

दुश्मनी अच्छी नहीं, चाहे फिर सामने भले कोई भी हो। रंजिश रखने वाला पहले स्वयं जलता है, फिर दूसरों को जलाता है। क्रोध जब जमा होकर अचार-मुरब्बा बन जाता है, तब दुश्मनी की शुरुआत होती है। कभी-कभी एक साधारण-सी ग़लतफ़हमी एक बड़ी रंजिश का कारण बन जाती है। अथवा कान के कच्चे होना भी कई दुश्मनों को जन्म दे देता है।

ऐसा नहीं है कि इनमें से कोई भी व्यक्ति मन से खुश होता है। बल्कि पहले ख़ुद तकलीफ़ में रहकर, फिर अगले को दुखी करके खुश होने का छलावा मात्र करता है। वस्तुस्थिति तो कुछ और ही होती है। और कभी-कभी बाद में अपनी ग़लती का एहसास होने पर शर्मिंदगी भी उठानी पड़ती है।

इसलिए—

“दुश्मनी जम के करो, पर ये गुंजाइश रहे कि जब भी हम दोस्त बन जाएँ, तो शर्मिंदा न हों।”

हिन्द व हिन्दी का सम्मान, है प्रमाण देशभक्ति का... आइए करें सृजन, शब्द से शक्ति का...

नाम - ऋतु कोचर

शिक्षा - बी.ए.

विद्या - गायन,भजन लेखन,नृत्य,पाक कला में विशेष रुचि, सामाजिक संस्था एक कदम राजनांदगांव की सदस्या। वर्तमान में काव्य सृजन में विशेष रुचि।

सम्मान- गायन, नृत्य, निबंध, वाद-विवाद आदि में अनेक संस्थाओं से पुरस्कृत।

पता - वार्ड नं. 14, सिनेमा चौक, मेन रोड़, कटंगी तह. कटंगी, जिला बालाघाट (म.प्र.) पिन- 481445

मोबाइल - 8770573730

ईमेल- ritukochar320@gmail.com

पं.क्र. (04/21/05/207665/19)
अन्तरा शब्दशक्ति

अन्तरा शब्दशक्ति के लिंक्स
Website:- www.antrashabdshakti.com
Facebook page:- https://www.facebook.com/antrashabdshakti/
Fecbook group:- https://www.facebook.com/groups/antraashabdshakti/

978-93-94528-54-3

मूल्य- 200/-

15, नेहरू चौक, मेन रोड वारासिवनी, जिला- बालाघाट (म.प्र.), पिन 481331, मो.- 9009423393, ईमेल- antrashabdshakti@gmail.com